तैत्तिरीय उपनिषद्

कृष्ण यजुर्वेद के तैत्तिरीय आरण्यक के सातवें, आठवें और नौवें अध्याय
शीक्षा वल्ली, ब्रह्मानन्द वल्ली तथा भृगु वल्ली का नाम तैत्तिरीय उपनिषद्
दूसरी व तीसरी वल्ली में विशुद्ध ब्रह्म विद्या का निरुपण किया गया है किन्तु उसकी उपलब्धि के लिए चित्त की एकाग्रता एवं गुरुकृपा की आवश्यकता है जिसके लिए शीक्षा वल्ली में कई प्रकार की उपासना तथा आचार का वर्णन किया गया है।

यस्माज्जातं जगत्सर्वं यस्मिन्नेव प्रलीयते।
येनेदं धार्यते चैव तस्मै ज्ञानात्मने नमः।।

जिससे यह सारा जगत उत्पन्न हुआ है, जिसमें ही यह लीन होता है और जिसके द्वारा यह धारण किया जाता है उस ज्ञान स्वरुप को मेरा नमस्कार है।

शीक्षा वल्ली

ओमिति ब्रह्म। ओमितिँ सर्वम्। ओमिति एतद अनुकृतिर्हस्म।

ओम ही ब्रह्म है, ओम ही सर्वरुप है, ओम ही इस जगत की अनुकृति है।

ऋतं च स्वाध्यायप्रवचने च। सत्यं च स्वाध्यायप्रवचने च। तपश्च स्वाध्यायप्रवचने च। दमश्च स्वाध्यायप्रवचने च। शमश्च स्वाध्यायप्रवचने च। अग्नयश्च स्वाध्यायप्रवचने च। अग्निहोत्रं च स्वाध्यायप्रवचने च। अतिथयश्च स्वाध्यायप्रवचने च। मानुषं च स्वाध्यायप्रवचने च। प्रजा च स्वाध्यायप्रवचने च। तद्धि तपस्तद्धि तपः।।

शास्त्रों के सत्य अर्थ का ज्ञान, सत्य वाणी, तपशचर्या, इन्द्रियों के दमन, मन के निग्रह, यज्ञ, अतिथि सत्कार, मानुष कर्म (विवाह आदि लौकिक कर्म), प्रजा उत्पत्ति, पौत्रोत्पत्ति के साथ–साथ शास्त्रों का अध्ययन–अध्यापन भी करें। यही तप है।

अनुशासन

वेदमनूच्याचार्योऽन्तेवासिनमनुशास्ति। सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायान्मा प्रमदः। आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेत्सीः। सत्यान्न प्रमदितव्यम्। धर्मान्न प्रमदितव्यम्। कुशलान्न प्रमदितव्यम्। भूत्यै न प्रमदितव्यम्। स्वाध्याय प्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्। देव पितृकार्याभ्यां न प्रमदितव्यम्।।

वेदाध्ययन कराने के पश्चात आचार्य शिष्य को उपदेश देता है – सत्य बोलो, धर्म का आचरण करो, स्वाध्याय में प्रमाद मत करो, आचार्य के लिए अभीष्ट धन लाकर संतान परम्परा का छेदन ना करो, सत्य से प्रमाद ना करो, धर्म से प्रमाद ना करो, कुशल कर्म से प्रमाद ना करो, समृद्धि देने वाले कर्म से प्रमाद ना करो, स्वाध्याय और प्रवचन से प्रमाद ना करो, देव कार्य और पितृ कार्यों से प्रमाद ना करो।

मातृदेवो भव। पितृदेवो भव। आचार्यदेवो भव। अतिथिदेवो भव। यानि अनवद्यानि कर्माणि तानि सेवितव्यानि नो इतराणि। यानि अस्माक ँ सुचरितानि तानि त्वयि उपास्यानि नो इतराणि। ये के चास्मत् श्रेयाँसो ब्राह्मणाः तेषां त्वयासनेन प्रश्वसितव्यम्।।

तुम मातृ देव हो, पितृ देव हो, आचार्य देव हो और अतिथि देव हो। जो अनिन्द्य कर्म है वही करो अन्य नही। हमारे (गुरुजनो के) जो शुभ आचरण हैं उन्ही की उपासना करो, अन्य की नही। जो हमसे भी श्रेष्ठ आचार्य हैं उनको आसन आदि देकर सेवा करो।

श्रद्धया देयम्। अश्रद्धयाऽ देयम्। श्रिया देयम्। ह्रिया देयम्। भिया देयम्। संविदा देयम्।।

श्रद्धा पूर्वक दो, अश्रद्धापूर्वक नहीं। अपने ऐश्वर्य के अनुसार दो। लज्जा पूर्वक दो। भय मानते हुए दो। मैत्री के निर्वाह के लिए दो।

अथ यदि ते कर्मविचिकित्सा वा वृत्तविचिकित्सा वा स्यात्। ये तत्र ब्राह्मणाः संमर्शिनः। युक्ता आयुक्ताः। अलूक्षा धर्मकामाः स्युः। यथा ते तत्र वर्तेरन्। तथा तत्र वर्तेथाः। अथाभि आख्यातेषु। ये तत्र ब्राह्मणाः संमर्शिनः। युक्ता आयुक्ताः। अलूक्षा धर्मकामाः स्युः। यथा ते तेषु वर्तेरन्। तथा तेषु वर्तेथाः। एष आदेशः। एष उपदेशः। एषा वेदोपनिषत्। एतदनुशासनम्। एवमुपासितव्यम्। एवमु चैतदुपास्यम्।।

यदि कर्म या आचार के विषय में कोई संदेह हो तो जो विचारशील, कर्म में नियुक्त, सरल बुद्धि एवं धर्माभिराशि ब्राह्मण हों वे जैसा आचरण करें वैसा ही तुम करो। यही आदेश है, यही उपदेश है, यही वेद का रहस्य है और यही अनुशासन है। इसी के अनुसार उपासना करो और इसी के अनुसार आचरण करो।

ब्रह्मानन्द वल्ली

अन्नाद्वै प्रजाः प्रजायन्ते। यः काश्च पृथिवीं आश्रिताः। अथो अन्नेनैव जीवन्ति। अथ एनदपि यन्ति अन्ततः। अन्न ँहि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्मात्सर्वौषधमुच्यते। सर्वं वै तेऽन्नम् आप्नुवन्ति येऽन्नं ब्रह्म उपासते।

अन्न से ही प्रजा उत्पन्न होती है। जो पृथ्वी को आश्रित करके स्थित है वह सब अन्न से ही उत्पन्न है और अन्त में अन्न में ही विलीन हो जाता है। अन्न ही सभी तत्वों में श्रेष्ठ है। इसीलिए यह सर्वोषधि कहलाता है। जो अन्न रुपी ब्रह्म की उपासना करते हैं वे सम्पूर्ण अन्न को प्राप्त करते हैं।

प्राणं देवा अनु प्राणन्ति। मनुष्याः पशवश्च ये। प्राणो हि भूतानामायुः। तस्मात् सर्वायुषमुच्यते। सर्वमेव त आयुर्यन्ति। ये प्राणं ब्रह्मोपासते। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य।

देवगण प्राण के आश्रय से ही चेष्ठा करते हैं, मनुष्य तथा पशु भी। प्राण ही प्राणियों की आयु है। इसीलिए वह सबका जीवन कहलाता है। जो प्राण रुप ब्रह्म की उपासना करते हैं वे दीर्घ आयु प्राप्त करते हैं। प्राण ही पूर्वोक्त अन्नमय शरीर की आत्मा है।

असन्नेव स भवति। असद्ब्रह्मेति वेद चेत्। अस्ति ब्रह्मेति चेद्वेद। सन्तमेनं ततो विदुरिति।

जो 'ब्रह्म' के अस्तित्व को सत्य नही मानता वह स्वयं भी असत्य हो जाता है। और जो ब्रह्म को सत्य मानता है उसे विद्वानजन सत् समझते हैं।

असद्वा इदमग्र आसीत्। ततो वै सदजायत। तदात्मानँ स्वयमकुरुत। तस्मात् तत् सुकृतम् उच्यत इति।

पहले यह जगत असत् ही था उसी से सत् की उत्पत्ति हुई। उस असत् ने स्वय अपने को ही रचा। इसलिए वह सुकृत कहा गया।

भीषाऽस्मात् वातः पवते। भीषोदेति सूर्यः। भीषाऽस्मादग्निश्चेन्द्रश्च। मृत्युर्धावति पन्चम इति।

इस ब्रह्म के भय से वायु बहता है, इसी के भय से सूर्य उदय होता है तथा इसी के भय से अग्नि, इन्द्र और पाँचवा मृत्यु दौडता है।

आनन्द की मीमांसा

युवा स्यात्साधु युवाध्यायक आशिष्ठो दृढिष्ठो बलिष्ठः तस्येयं पृथिवी सर्वा वित्तस्य पूर्णा स्यात्। स एको मानुष आनन्दः।

साधु स्वभाव वाला नवयुवक, वेद पढा हुआ अत्यन्त आशावान, दृढ एवं बलिष्ठ हो और साथ ही उसे सम्पूर्ण धन–धान्य से पूर्ण पृथ्वी प्राप्त हो तो यह एक मानुष आनन्द है।

ते ये शतं मानुषा आनन्दाः। स एको मनुष्यगन्धर्वाणाम् आनन्दः। ते ये शतं मनुष्यगन्धर्वाणाम् आनन्दाः। देवगन्धर्व – पितृणां – आजानजानां देवानां – कर्मदेवानां – देवानां – इन्द्रः – ब्रहस्पति – प्रजापति। स एको ब्रह्मण आनन्दः। श्रोत्रियस्य च अकामहः तस्य।।

ऐसे जो सौ मानुष आनन्द हैं वह मनुष्य–गंधर्वों का एक आनन्द है। जो सौ मनुष्य–गंधर्वों के आनन्द हैं वह देव–गंधर्व का एक आनन्द है। इसी प्रकार उत्तरोत्तर पितृगण, आजानज देवता, कर्म देवता, देवगण, इन्द्र, ब्रहस्पति, प्रजापति के आनन्द हैं। वह अन्तिम सौ ब्रह्म के आनन्द हैं। जो अकाम श्रोत्रिय है उसे वह आनन्द प्राप्त है।

यतो वाचो निवर्तन्ते। अप्राप्य मनसा सह। आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्। न बिभेति कुतश्चनेति। एत ँ ह वाव न तपति किमह ँ साधु नाकरवम्। किमहं पापम् अकरवमिति। स य एवं विद्वानेते आत्मान ँ स्पृणुते। उभे हि एव एष एतं आत्मान ँ स्पृणुते। य एवं वेद। इत्युपनिषत्।।

जहां से मन के सहित वाणी उसे प्राप्त न करके लौट आती है उस ब्रह्म क आनन्द को जानने वाला किसी से भयभीत नही होता। उस विद्वान को, मैने शुभ क्यों नहीं किया, पाप कर्म क्यों किया – इस प्रकार की चिन्ता संतप्त नहीं करती। उसे यह दोनो आत्म स्वरुप ही दिखाई देते हैं। वह कर्मों के बंधन में आसक्त नहीं होता। यही उपनिषद है।

भृगु वल्ली

भृगुर्वै वारुणिः। वरुणं पितरं उपपसार। अधीहि भगवो ब्रह्मेति। तस्मा एतत्प्रोवाच। अन्नं प्राणं चक्षुः श्रोत्रं मनो वाचमिति। त ँ होवाच। यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते। येन जातानि जीवन्ति। यत् प्रयन्ति अभिसंविशन्ति। तद्विजिज्ञासस्व। तद्ब्रह्मेति। स तपः अतप्यत।।

भृगु अपने पिता वरुण देव के पास गए और कहा भगवन मुझे ब्रह्म का बोध कराइये। वरुण ने उससे कहा अन्न, प्राण, नेत्र, श्रोत्र, मन और वाक् ये ब्रह्म की उपलब्धि के द्वार हैं। जिससे यह सब भूत उत्पन्न होते हैं, जिससे यह जीवित रहते हैं और अन्त में जिसमें लीन होते हैं उसे जानने की इच्छा कर वही ब्रह्म है। तब भृगु ने तप किया।

स तपस्तप्त्वा अन्नं ब्रह्मेति व्यजानात्। अन्नात् हि एव खलु इमानि भूतानि जायन्ते। अन्नेन जातानि जीवन्ति। अन्नं प्रयन्ति अभिसंविशन्ति इति।

तप करके भृगु ने जाना कि अन्न ब्रह्म है क्योंकि अन्न से ही यह सब प्राणी उत्पन्न होते हैं, अन्न से ही जीवित रहते हैं और अन्न में ही लीन हो जाते हैं।

प्राणो ब्रह्मेति व्यजानात्।। मनो ब्रह्मेति व्यजानात्।। आनन्दो ब्रह्मेति व्यजानात्।।

वरुण देव द्वारा पुनः तप करने को कहने पर भृगु द्वारा बार–बार तप करके यह जाना गया कि प्राण ब्रह्म है – मन ब्रह्म है – आनन्द ब्रह्म है।

अन्नं न निन्द्यात्। तद्व्रतम्। प्राणो वा अन्नम्। शरीरमन्नादम्। प्राणे शरीरं प्रतिष्ठितम्। शरीरे प्राणः प्रतिष्ठितः। तत् एतत् अन्नं अन्ने प्रतिष्ठितम्।

अन्न की निन्दा मत करो। यह व्रत है। प्राण ही अन्न (भोग्य) है। शरीर अन्नाद (भोक्ता) है। प्राण में शरीर स्थित है। शरीर में प्राण स्थित है। इस प्रकार एक दूसरे के आश्रित होने के कारण वे एक दूसरे के अन्न हैं।

अन्नं न परिचक्षीत। तद्व्रतम्। आपो वा अन्नम्। ज्योतिरन्नादम्। अप्सु ज्योतिः प्रतिष्ठितम्। ज्योतिष्यापः प्रतिष्ठिताः। तत् एतत् अन्नं अन्ने प्रतिष्ठितम्।

अन्न का त्याग न करें। यह व्रत है। जल ही अन्न है। ज्योति अन्नाद है। जल में ज्योति प्रतिष्ठित है और ज्योति में जल प्रतिष्ठित है। इस प्रकार ये दोनो अन्न ही अन्न में प्रतिष्ठित हैं।

न कंचन वसतौ प्रति आचक्षीत। तद्व्रतम्। तस्मात् अया कया च विधया बह्व् अन्नं प्राप्नुयात्।

घर आए अतिथि का परित्याग न करें। यह व्रत है। तदार्थ बहुत सा अन्न प्राप्त करें।

अहमन्नम् अहमन्नम् अहमन्नम्। अहमन्नाद अहमन्नाद अहमन्नादः। इत्युपनिषत्।।

मै अन्न (भोग्य) हूं। मै अन्न हूं। मै अन्न हूं। मैं ही अन्नाद (भोक्ता) हूं। मै ही अन्नाद हूं। यही उपनिषद् है।